IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

मानवतावाद एवं स्वामी विवेकानंद

प्रो० जितेंद्र कुमार शर्मा

आचार्य, योग विभाग

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय वि०वि०, अमरकंटक, (म०प्र०)

आलेख सार –

मानवतावाद जीवन के प्रति एक दृष्टिकोण है जिसके केंद्र में है 'मनुष्य' और मनुष्य का विकास। प्रायः यह विचारधारा मनुष्यों के मूल्यों और उनसे सम्बन्धित मसलों पर ही केंद्रित होती है। यह एक प्रगतिवादी वैज्ञानिक विचारधारा मानी जाती है जो बुद्धि और तर्क पर आधारित होती है और धार्मिक दृष्टिकोणों और अलौकिक विचार पद्धतियों की अवहेलना करती है। मानवतावादियों का मानना है कि दुनिया एक प्राकृतिक जगह है जिसमें कोई अलौकिक पक्ष नहीं है। जीवन का कोई परम अर्थ नहीं है। दुनिया को बेहतर बनाने के लिए अकेले मनुष्य ही जिम्मेदार है धर्म या कोई अलौकिक ईश्वरीय सत्ता नहीं। यह विचारधारा सभी लोगों के लिए समान अधिकारों और अवसरों की वकालत करती है। मानवतावाद सामाजिक न्याय, समावेशन और विविधता की रक्षा करता है। प्रतिपाद्य को लक्ष्यगत रखते हुए इसे हम भौतिकता केंद्रित मानवतावाद या बौद्धिक मानवतावाद की संज्ञा दे सकते हैं। स्वामी विवेकानंद का मानवतावाद वेदान्त प्रसूत मानवतावाद है जिसे हम आध्यात्मिक मानवतावाद की संज्ञा दे सकते है। जिसमें न तो विज्ञान का निराकरण किया गया है और न भौतिक पदार्थ का। बल्कि इसे संस्कारित और संवर्धित करके विज्ञान को विशुद्ध विज्ञान (अध्यात्मपोषित विज्ञानवाद) और जड़ पदार्थ को जड़ न मानकर ब्रह्मांडीय चेतना की न्यूनतम अभिव्यक्ति माना गया है।

मानवतावाद में वर्णित नैतिकता की रक्षा और संवर्धन बिना अलौकिक सत्ता को माने संभव नहीं है। भले ही यह अलौकिक सत्ता कोई अवतारी दिव्यपुरुष या देहधारी ईश्वर न हो। जब तक हम प्राणिमात्र में अलौकिक सत्ता के अधिवास को नहीं मानेंगे तब तक नैतिकता के धरातल पर उसे बराबरी का अधिकार देना बौद्धिक आंदोलन मात्र रह जाएगा।

सभी प्राणियों में अपने को देखना और अपने में सभी प्राणियों को देखना ही तो गीता का समत्व भाव है। गीता का समदर्शी भाव का आदर्श ही मानवतावाद का मूल है।

हम कह सकते है कि गीता का समत्व भाव और लोकसंग्रह का आदर्श स्वामी विवेकानंद के आध्यात्मिक मानवतावाद में पर्यवसित होता है, साकार होता है। जिसमें वेदान्त की प्रज्ञा और बुद्ध की करुणा का मणिकांचन सुयोग है। आध्यात्मिक मानवतावाद नर से नारायणत्व और पशुता से दिव्यता की प्राप्ति का वैदिक उद्घोष है। स्वामीजी की इस विचारधारा में जीवन के किसी भी पक्ष का निषेध नहीं है, समाज के किसी वर्ग की अवहेलना नहीं है बल्कि समस्त विरोध और निषेध रूपांतरित होकर दिव्य विकास का एक अंग बन जाता है।

बीज शब्द – संवर्धन – विकास

समभाव – सभी प्राणी आपस में समान है। सब में एक ही ईश्वरीय सत्ता का वास है।

जिज्ञासु – किसी विषय को जानने की इच्छा रखने वाला।

अहर्निश – दिन-रात

भौतिकवाद - दर्शनशास्त्र का वह सिद्धांत, जिसके अनुसार परम तत्त्व भौतिक या जड़ है।

अवलंबित – किसी के सहारे पर टिका हुआ

जगन्नियता – संसार का नियंत्रण करने वाला

समाहार – समापन

अवनति – पतन

प्रस्तावना –

मानववाद, मनुष्यवाद या मानवतावाद दर्शनशास्त्र की उस विचारधारा को कहते हैं जो मनुष्यों के मूल्यों और उनसे संबंधित मसलों पर ध्यान देती है। अक्सर मानववाद में धार्मिक दृष्टिकोणों और अलौकिक विचारपद्धतियों को हीन समझा जाता है और तर्क शक्ति, न्यायिक सिद्धांतों और आचार नीति (Ethics) पर जोर होता है।

मानवतावाद जीवन के प्रति एक दृष्टिकोण है जो पूरे इतिहास में पाया जाता है और आज यू०के० और दुनिया भर में लाखों लोगों द्वारा इसका पालन किया जाता है। मानवतावादी होने का मतलब मानवता के साथ खड़ा होना, मानवाधिकारों और मानवीय मूल्यों से प्रेरित होकर खड़ा होना है। मानवतावाद इस तथ्य पर जोर देता है कि हम मनुष्य दुनिया को बदलने में सक्षम है। "Think for yourself and act for everyone" मानवतावाद का मूल मंत्र है।

विवरण (Description) –

मानवतावाद की प्रमुख विशेषताएँ निमन्वत हैं –

1. **मानव प्राणी** – मानवतावादियों का मानना है कि मनुष्य कि उत्पत्ति प्राकृतिक है। हम सभी अन्य जीवित चीजों की तरह स्वाभाविक रूप से विकसित हुए हैं। हमने कई क्षमताएँ विकसित की हैं और अगर हम इनका सही इस्तेमाल करें तो हमारे पास अच्छा और खुशहाल जीवन जीने की क्षमता है।
2. **दुनिया को समझना** – मानवतावादियों का मानना है कि दुनिया एक प्राकृतिक जगह है जिसमें कोई अलौकिक पक्ष नहीं है। उनका मानना है कि विज्ञान और साक्ष्य की खोज दुनिया के बारे में हमारे सवालों का जवाब देने का सबसे अच्छा तरीका प्रदान करती है।
3. **एक जीवन** – यह एक ऐसा जीवन है जो हमारे पास है इसलिए हमें इसका पूरा लाभ उठाना चाहिए। जीवन का कोई एक परम अर्थ नहीं है। इसके बजाए यह हम पर निर्भर करता है कि हम अपने जीवन को सार्थक कैसे बनायें। हमें यह तय करने की आजादी होनी चाहिए कि हम कैसे जीते हैं (जब तक कि हम दूसरों को नुकसान न पहुचाएँ) खुशी की तलाश करें और दूसरों को भी ऐसा करने में मदद करें।
4. **मानवतावादी नैतिकता** – हमारी नैतिक क्षमताओं की उत्पत्ति मनुष्य के अंदर और सामाजिक प्राणी के रूप में हमारे विकास में निहित हैं। उनका मानना है कि हमारे कार्य करने का तरीका तय करते समय हमें अपने कार्यों के परिणामों और अन्य लोगों और जानवरों पर संभावित प्रभाव पर विचार करते हुए तर्क और सहानुभूति का प्रयोग करना चाहिए।
5. **समाज में मानवतावाद** – दुनिया को बेहतर बनाने के लिए अकेले मनुष्य ही जिम्मेदार है। कई लोग समानता, मानवाधिकार और धर्म निरपेक्षता के लिए अभियान चलाते हैं। कई लोग मानवता द्वारा की गई प्रगति का जश्न मनाते हैं, लेकिन उस काम को भी पहचानते हैं जो अभी भी किया जाना बाकी है।

मानवतावाद से संबंधित कुछ अन्य विशेषताएँ निमन्वत हैं –

- मानवतावाद मानव केंद्रित विचारधारा है जो मनुष्य के बारे में वैज्ञानिक एवं सहानुभूति दृष्टिकोण रखती है।
- इसमें समता एवं सहयोग को बढ़ावा दिया जाता है।
- मानवतावाद सामाजिक न्याय, समावेशन और विविधता की रक्षा करता है।
- इसमें आलोचनात्मक सोच और तर्कसंगत जाँच को बढ़ावा दिया जाता है।
- मानवतावाद सहानुभूति और करुणा को बढ़ावा देता है। इसमें शिक्षाओं और आजीवन सीखने को बहुत महत्व दिया जाता है।
- इसमें उन नैतिक सिद्धांतों पर बल दिया जाता है जो मानव कल्याण, व्यक्तिगत अधिकार और सामाजिक न्याय को प्राथमिकता देते हैं।
- मानवतावाद मनुष्य को मनुष्य से कम नहीं मानता।
- मानवतावादियों का मानना है कि मनुष्य सचेत, जिज्ञासु और रचनात्मक है। मनुष्य अपने जीवन को सार्थक बनाने के लिए स्वतंत्र है। मनुष्य अपने जीवन में खुशी की तलाश करके दूसरों को भी ऐसा करने में मदद करके अपने जीवन को अर्थ दे सकता है।

जहाँ तक स्वामी विवेकानंद का प्रश्न है वे उक्त भौतिकता केंद्रित मानवतावाद के स्थान पर अध्यात्म केंद्रित मानवतावाद के समर्थक हैं। मेरी समझ से उनकी वेदान्त प्रसूत मानवतावादी विचारधारा को **आध्यात्मिक मानवतावाद** की संज्ञा दी जा सकती है जो एकात्ममानववाद के समरूप है। जैसे ही हम प्रकृति को जड़ प्रकृति के रूप में परिभाषित करते हैं प्रकृति और मनुष्य का द्वैत हमारे समक्ष मूर्तमान हो जाता है। और फिर सम्पूर्ण प्रकृति हमें ऐसी दासी या चेरी के रूप में प्रतीयमान होने लगती है, जो अहर्निश स्वामी की सेवा में लगी रहती है। फिर उस दासी का हर प्रकार से शोषण करना, उस पर आधिपत्य जमाना हमारा कर्तव्य हो जाता है। वैश्विक स्तर पर यही द्वैत भाव सारी समस्याओं की जड़ है। हम अपने माता-पिता और भाइयों से प्यार क्यों करते है? हम उनकी प्रगति में शरीक क्यों होते हैं? हम उनके दुःख में दुःखी क्यों होते है इसका एकमात्र कारण यही है कि उन्होंने हमें जन्म दिया है, वे हमारे भाई है। बिना मातृत्व भाव या भाईचारे के भाव के सम्पूर्ण मानव जाति के हित में कार्य करना केवल एक यांत्रिक भावना है जिसमें दीर्घकालीन अनवरतरता और सहजता संभव नहीं है। मनुष्य स्वभावतः स्वार्थी और आत्मकेंद्रित होता है। जड़ प्रकृति से विकसित होने के कारण उसके मन का प्रवाह भी सांसारिक वैभव और काम, क्रोध, मद लोभ से प्रभावित होता है। ईश्वर विहीन नैतिकता, यंत्रवत नैतिकता है जो सांसारिक भोग-विलास के धक्के से कभी भी टूट सकती है इसीलिए भारतीय चिंतन में मानवतावाद को आध्यात्मिकता से जोड़ते हुए ''आत्मनः मोक्षार्थम् जगत् हिताय च' के रूप में परिभाषित किया गया है। आखिरकार ईश्वर नैतिकता का संरक्षक भी है और संपोषक भी है विवेकानंद का आध्यात्मिक मानवतावाद जड़ जगत में परात्पर चेतना या ब्राह्मी चेतना के साक्षात्कार के साथ वनस्पति जगत, पशु जगत और मानव जगत में उसी सत्ता का अधिवास स्वीकार करते हुये सबके विकास को सुनिश्चित करता है। विकास की इस प्रक्रिया में निम्नतर सत्ता का विनाश नहीं होता है बल्कि वह रूपांतरित होकर परात्पर सत्ता का अंग बन जाती है। अर्थात् अध्यात्मोन्मुख भौतिक प्रगति।

आइये, इसी पृष्ठभूमि में स्वामी विवेकानंद के मानवतावाद की गवेषणात्मक विवेचना करें।

विश्व एक सर्वांगीण सभ्यता की अपेक्षा कर रहा है। पूर्वजों से भारत ने जो अनुपम आध्यात्मिक चिंतन उत्तराधिकारी के रूप में प्राप्त किया है, संसार उन्ही रत्नों के लिए व्याकुल है … अतएव हमें देश के बाहर जाना ही होगा। हमारे अध्यात्म के बदले उनके पास जो देय है उसे लेना ही होगा। आध्यात्मिक राज्य के अपूर्व तत्त्वों के विनिमय में हम सीखेंगे जड़-जगत की अद्भुत कार्य नीति। समभाव के बिना मित्रता संभव नहीं। यदि अंग्रेज या अमेरिकी से समता रखने की अभिलाषा है तो तुम्हें उनसे जैसा सीखना होगा, वैसे ही उन्हें सिखाना भी होगा अब भी संसार को बहुशताब्दियों तक शिक्षा देने की सामग्री तुम्हारे पास पर्याप्त है। भारत को यूरोप से बाह्य प्रकृति पर विजय प्राप्त करना सीखना है और यूरोप को भारत से अन्तर्जगत् पर विजय पाना सीखना है। तब हिन्दू और युरोपियन अलग-

अलग नहीं होंगे। तब होगी एक आदर्श मानव जाति जिसने बाहरी और अन्तर्जगत दोनों पर ही विजय प्राप्त कर ली है। मानव जाति के एक पहलू का विकास हमने किया है और उन्होंने दूसरे का। आवश्यकता है दोनों के सम्मेलन की।[1]

तुम चाहे हजारों समितियाँ गढ़ लो, चाहे बीस हजार राजनीतिक सम्मेलन करो। चाहे पचास हजार संस्थायें स्थापित करो इसका कोई फल न होगा, जब तक तुम्हारे भीतर वह सहानुभूति वह प्रेम न आएगा, जब तक तुम्हारे भीतर वह हृदय न आएगा जो सबके लिए सोचता है। जब तक फिर से भारत को बुद्ध का हृदय प्राप्त नहीं होता और भगवान कृष्ण की वाणी व्यावहारिक जीवन में परिणत नहीं की जाती तब तक हमारे लिए कोई आशा नहीं।[2]

निम्न से निम्न कीट में तथा उच्च से उच्च मनुष्य में एक ही आध्यात्मिक तत्त्व विद्यमान है। कीट निम्न कोटि का इसलिए है कि उसके देवत्व पर माया जनित अध्यास अधिक रहता है। जिस पदार्थ में इस तरह का अध्यास सबसे कम रहता है वह सबसे उच्च कोटि का होता है। सभी वस्तुओं के पीछे उसी देवत्व का अस्तित्व है और इसी से नैतिकता का आधार प्रस्तुत होता है।[3]

सम्पूर्ण चराचर जगत में एक ही ब्राह्मी सत्ता का साक्षात्कार करते हुए स्वामीजी ने बाह्य प्रकृति और आत्मस्थ प्रकृति में द्वैतभाव का निषेध किया। सम्पूर्ण बाह्य प्रकृति आत्मवत् है। अतः भौतिक और आध्यात्मिक संस्कृति के पारस्परिक विरोध का कोई मूल्य नहीं। यही सच्चा आध्यात्मिक मानवतावाद है।

The West had tried to conquer external nature and the East has tried to conquer internal nature. Now East and West must work hand in hand for the good of each other, without destroying the special characteristics of each. The West has much to learn from the East, and the East has much to learn from the West, in fact the future has to be shaped by a proper fusion of the two ideals. Then there will be neither East nor West but one humanity.[4]

भौतिकवाद और अध्यात्मवाद के मिलन में ही विश्वसभ्यता की उन्नति है। अध्यात्मवाद के धरातल पर भौतिकवाद की प्रतिष्ठा हो सकती है स्वामीजी जहाँ एक तरफ देश की समृद्ध आध्यात्मिक विरासत से गदगद थे वहीं भूखे-तड़पते, अधनंगे हिंदुस्तानियों को देखकर उनका हृदय द्रवित हो जाता था। "उन्होंने पाया कि उनकी मातृभूमि आध्यात्मिकता से स्पंदित है परंतु भौतिक समृद्धि से मृतप्राय है। दरिद्रता और अत्याचार चारों ओर फैला हुआ था। अज्ञान और अंधविश्वास का सर्वत्र साम्राज्य व्याप्त था। जनसाधारण पर अत्याचार की हद हो रही थी। उन्हें यह विश्वास दिलाया जा रहा था कि वे कुछ भी नहीं है। स्वामीजी ने अनुभव किया कि असली समस्या आध्यात्मिकता की कमी नहीं वरन दारिद्रय है। दरअसल यह दारिद्रय ही आध्यात्मिकता के लिए खतरनाक हो रहा था। एक दरिद्र भूखा मनुष्य तो भौतिकवादी होता ही है क्योंकि उसके लिए रोटी ही भगवान होती है। स्वामीजी को लगा कि आध्यात्मिकता को फैलाने के लिए इस दरिद्रता को दूर करना ही होगा। और यदि इस देश में किसी धर्म को प्रचार करना पड़े तो उस धर्म को यह सिखाना पड़ेगा कि ईश्वर के साथ मनुष्य के प्रति संवेदनशील होना भी उतना ही आवश्यक है।[5]

सच्चा मानववाद, अध्यात्मवाद के बिना संभव नहीं है। शुष्क बौद्धिकता जन्य तर्क के ऊपर अवलंबित मानववाद कभी स्थायी नहीं हो सकता जब तक कि इस भावना का प्रचार, प्रसार और साक्षात्कार न हो जाए कि सभी के अंदर एक ही परमात्मा निवास करता है। वही परमात्मा जगत का संचालक भी है। स्वामीजी के मानवतावाद में यह परमात्मा शक्ति (आध्यात्मिकता) जहाँ लोगों में एक तरफ समानता, स्वतंत्रता और भ्रातृत्व का भाव पैदा करती है वहीं मानव को अनैतिक कार्यों से रोकने हेतु प्रतिरोधक शक्ति के रूप में भी कार्य करती है। अध्यात्म में ईश्वर का यह रूप जगन्नियंता या प्रधान न्यायाधीश का होता है। जिसका उल्लेख करते हुए गीतानायक कृष्ण ने गीता में कहा है - "दण्डो दमयताम अस्मि"। अन्याय, अत्याचार के प्रति परमात्मा के दण्ड का यह भय हर मनुष्य को अनैतिक कार्यों को करने से रोकता भी है।

विवेकानंद के हृदय में प्राणिमात्र के प्रति करुणा का सागर उमड़ता रहता था। उनका मानना था कि जाति पाँति और छुआ छूत के विद्वेषाग्नि से जलता हिन्दू समाज अंदर से खोखला और निर्वीय होता जा रहा है। सच्चे मानवतावाद की प्रतिष्ठा प्राणिमात्र के प्रति प्रेम और करुणा के ठोस धरातल पर ही हो सकती है।

यदि तुम आर्य, द्रविड और अब्राह्मण जैसे तुच्छ विषयों को लेकर तू-तू, मैं-मैं करोगे, आपस में लड़ोगे तो भारत का विनाश निश्चित है।[6]

जिस प्रकार एक ही अग्नि जगत में प्रविष्ट होकर अनेक रूपों में परिवर्तित हो गयी उसी प्रकार एक ही ब्राह्मी सत्ता विविध जीवों के रूप में प्रकट होती है। संसार की प्रत्येक वस्तु ब्रह्म की ही वास्तविक अभिव्यक्ति है।[7]

यह ठीक है कि अमीबा से गौतम बुद्ध की अभिव्यक्ति हुई पर चूँकि जगत में ऊर्जा की सम्पूर्ण मात्रा स्थिर है अतः अमीबा भी एक प्रकार का गौतम बुद्ध ही रहा होगा। जगत की विविधता को परिभाषित करते हुए उन्होंने कहा था 'कीटाणु ब्रह्मांडीय ऊर्जा (परम सत्ता) को निम्नतम मात्रा में अभिव्यक्त करता है और मनुष्य उसी ऊर्जा को कुछ अधिक मात्रा में अभिव्यक्त करता तथा कोई ईश्वरीय व्यक्ति उस ऊर्जा को अधिकतम मात्रा में अभिव्यक्त करता है।[8]

सभी वस्तुओं के पीछे उसी देवत्व का अस्तित्व है और इसी से नैतिकता का आधार प्रस्तुत होता है। प्रत्येक व्यक्ति को अभिन्न समझकर उसके साथ प्रेम करना चाहिए, क्योंकि समस्त विश्व मौलिक स्तर पर एक है। दूसरे को कष्ट देना अपने आप को कष्ट देना है। दूसरे के साथ प्रेम करना अपने आप से प्रेम करना है। इसी से अद्वैत नैतिकता का वह सिद्धांत उद्भूत होता है जिसका समाहार एक आत्मोत्सर्ग शब्द में किया गया है।[9]

स्वामीजी के मानवतावाद में रूप, रंग, लिंग, जाति, भाषा, वेशभूषा जैसे क्षुद्र भेद/प्रभेद के लिए कोई स्थान नहीं है। यहाँ प्राणिमात्र के प्रति समता और प्रेम का भाव है। न कोई छोटा है। न कोई बड़ा है। सभी परमात्मा की संतान है, बिना किसी भेदभाव के सभी के कल्याण के लिए प्रयास करना, सभी के साथ प्रेम करना सच्चा मानवतावाद है। देश निर्माण के लिए कर्णधारों को संबोधित करते हुए स्वामीजी कहते हैं-

हे युवक गण! तुम दरिद्र, मूर्ख एवं पददलित मनुष्य की पीड़ा को अपने हृदय से अनुभव करो। उस अनुभव की वेदना से तुम्हारे हृदय की धड़कन रुक जाए, सिर चकराने लगे, और तुम पागल होने लगो, तब जाकर ईश्वर के चरणों में अपने अंतर की वेदना को बताओ। तब ही तुम्हें उनसे शक्ति एवं सहायता मिलेगी - अदम्य उत्साह, अनंत शक्ति मिलेगी ... न धन से काम होता हैं, न नाम-यश से होता है। विद्या से भी नहीं होता, प्रेम से होता है। चरित्र ही बाधा-विघ्न की वज्र कठोर दीवारों के बीच से रास्ता बना सकता है।[10]

सच्चा मानवतावाद शोषण विहीन सामाजिक व्यवस्था पर आधारित है। एक ऐसी व्यवस्था जहाँ पर कोई किसी के प्रति द्वेष न रखे। एक गिरे तो दूसरा उठाने का प्रयत्न करे। आखिरकार सभी में तो उसी परात्पर सत्ता का अधिवास है। मनुष्य अज्ञानतावश काम, क्रोध, लोभ, मोह के वशीभूत होकर किसी का शोषण और उसके प्रति द्वेष रखता है।

"मुझे लगता है कि हमारा सबसे बड़ा जातीय पाप है, जनसाधारण की उपेक्षा और यही हमारी अवनति का मुख्य कारण है। जब तक भारत के साधारण लोग भली-भांति शिक्षित नहीं होते। भली भांति खा नहीं पाते, जब तक उच्च वर्ग के लोग उनका ठीक खयाल नहीं रखते तब तक चाहे कितने ही राजनीतिक आंदोलन क्यों न हों, कुछ नहीं होने वाला है। ... भारत को यदि पुनर्जीवित करना है तो हमें अवश्य ही उनके लिए काम करना होगा।

अनाथ, दरिद्र, निरक्षर और कृषक-श्रमिक ही हमारे लक्ष्य हैं। पहले उनके लिए काम करने के बाद अगर समय रहा तो कुलीन की बारी आएगी।[11]

स्वामीजी के मानवतावाद में भौतिकता या भौतिक अपरिग्रह पर आग्रह है। यहाँ तो ईशावास्य उपनिषद की उस ऋचा को लोकजीवन और वैयक्तिक जीवन में उतारना है जिसमें स्पष्ट निर्देश है - 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद धनम्"।

पहले रोटी और तब फिर धर्म चाहिए, भौतिक समृद्धि भी आवश्यक है। सिर्फ यही नहीं, जरूरत से ज्यादा वस्तुओं का व्यवहार भी आवश्यक है जिससे गरीबों के लिए नए-नए रोजगार मिलते रहें। जो ईश्वर मुझे यहाँ पर रोटी नहीं दे सकता वही मुझे स्वर्ग में अनंत

सुख देगा, मैं विश्वास नहीं करता। भारत को उठाना होगा, गरीबों को खिलाना होगा, शिक्षा का विस्तार करना होगा और पौरोहित्य के पाप को दूर करना होगा। …

प्राचीन धर्म से पौरोहित्य के अत्याचार और अनाचार को उखाड़ फेंको, तब देखोगे यह धर्म ही संसार का सर्वश्रेष्ठ धर्म है।[12]

स्वामीजी के मानवतावाद में शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। शिक्षा न केवल संस्कार देती है, अनगढ़ मानव को गढ़कर महामानव बनाती है बल्कि स्वावलंबन भी प्रदान करती है। इस शिक्षा और स्वावलंबन पर बिना किसी भेदभाव के सबका अधिकार होना चाहिए। शिक्षा,धर्म, जाति,रूप, रंग या लिंग से जुड़ी नहीं है। शिक्षा पर गरीब, अमीर, उच्च और निम्न वर्ण एवं स्त्री, पुरुष सबका समान अधिकार है। भला बिना स्त्रियों को शिक्षित किए समाज का विकास कैसे संभव है। इसी कारण नारी जागरण का आह्वान करते हुए स्वामीजी कहते हैं- "स्त्रियों को पहले उठाना होगा जनसाधारण को जगाना होगा, तभी तो देश का कल्याण, भारत का कल्याण होगा। स्त्रियों की पूजा करके ही सभी जातियाँ बड़ी बनी हैं। जिस देश में, जिस जाति में स्त्रियों की पूजा नहीं वह जाति कभी बड़ी नहीं हुई और न कभी हो सकेगी।"

हमारे निम्न लोगों के लिए हमारा कर्तव्य है सिर्फ उन्हें शिक्षा देना और उनके खोए हुए व्यक्तित्व को फिर से प्रज्ज्वलित करना। उन्हें अच्छे-अच्छे भाव देने होंगे। उनके चारों ओर दुनिया में क्या हो रहा है इस संबंध में उनकी आँखें खोल देनी होंगी। इसके बाद वे अपना उद्धार खुद कर लेंगे।

पहले पूरी जाति को शिक्षा दो...समाज सुधार के लिए प्रथम कर्तव्य है जनसाधारण को शिक्षित करना। यह शिक्षा सम्पूर्ण होने तक प्रतीक्षा करनी ही पड़ेगी।[13]

जनता को अगर आत्मनिर्भर बनने की शिक्षा न दी जाए तो भारत के एक छोटे से गाँव के लिए संसार की सारी दौलत लगा देने से भी वह पर्याप्त नहीं होगी। शिक्षा प्रदान करना ही हमारा प्रधान कार्य होना चाहिए, चरित्र और बौद्धिक विकास के लिए शिक्षा का विस्तार करना चाहिए।

स्वामीजी का मानना है कि मनुष्य का गौरव स्वार्थ साधना में नहीं बल्कि विश्वकल्याण के लिए आत्मबलिदान में निहित है। स्वामीजी का मानवतावाद मनुष्य की स्वार्थी और आत्मकेंद्रित प्रवृत्तियों के विरुद्ध खुला विद्रोह है। "यदि संसार के नर-नारियों का दश लक्षांश भी बिल्कुल चुप रहकर एक क्षण के लिए कहे - तुम सभी ईश्वर हो, हे मानवों! हे पशुओं! हे सब प्रकार के जीवित प्राणियों! तुम सभी एक जीवंत ईश्वर के प्रकाश हो तो आधे घंटे के अंदर ही सारे जगत का परिवर्तन हो जाए।[14]

निष्कर्ष - निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि विवेकानंद का मानवतावाद, आध्यात्मिक मानवतावाद है जहाँ चराचर जगत परात्पर सत्ता की अभिव्यक्ति है अतः समान रूप से पूज्य और वंदनीय है। सम्पूर्ण संसार सर्वोच्च नैतिकता के सर्वोच्च अधिष्ठान परमेश्वर द्वारा संचालित और नियंत्रित है। जाति, वर्ग, वर्ण, रूप रंग लिंग भाषा-वेशभूषा के भेदप्रभेद से ऊपर उठकर सभी को परमात्मस्वरूप मानकर सबकी सेवा करना सबके कल्याण के लिए कार्य करना ही सच्चा मानवतावाद है। इस हेतु मनुष्य को स्वार्थी और आत्मकेंद्रित प्रवृत्तियों से ऊपर उठना होगा। उसके विरुद्ध आवाज उठानी होगी। "आत्म त्याग द्वारा जगत कल्याण" स्वामी विवेकानंद के अध्यात्म केंद्रित मानवतावाद का केंद्र बिन्दु है। संसार के सभी मनुष्यों को उदार और सार्वभौमिक नैतिक मूल्यों को आत्मसात करना होगा। यह महान कार्य शिक्षा और स्वावलंबन से ही पूरा किया जा सकता है। धर्म के कर्मकाण्ड के पक्ष पर जोर न देकर उसके दार्शनिक पक्ष पर जोर देना होगा। सभी धर्मों की मूल एकता को मानना पड़ेगा। मानवता और दिव्यता को एक साथ जोड़ना मानवतावाद का प्रमुख अंग या विशेषता है। अध्यात्म त्याग, स्वावलंबन और सेवा भाव को वैश्विक राष्ट्रवाद का हिस्सा बनाया जाए तभी आत्मनोमोक्षार्थम् जगत हिताय च और माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्या का दिव्य औपनिषद संदेश पुनर्साकार हो सकेगा।

संदर्भ सूची -

1. सबके स्वामी जी (अप्रैल 2012) प्रकाशक - रामकृष्ण मिशन इंस्टिट्यूट ऑफ कल्चर, शोल पार्क, कलकत्ता (पृ० 62-63)

2. विवेकानंद साहित्य संचयन (सस्ता द्वितीय संस्करण 1988) प्रकाशक - रामकृष्ण मठ घन्तोली, नागपुर पृ०234

3. वही। पृ०106

4. Vivekanand. His call to the Nation (June 2022) Published by Swami Shuddhidanand, Advaita Ashram Champawat. Uttarakhand. India (Page. 30-31)

5. सबके स्वामी जी (अप्रैल 2012) प्रकाशक - रामकृष्ण मिशन इंस्टिट्यूट ऑफ कल्चर, शोल पार्क, कलकत्ता (पृ० 72)

6. विवेकानंद साहित्य संचयन (1988) प्रकाशक - स्वामी व्योमरुपानंद, अध्यक्ष रामकृष्ण मठ, नागपपुर पृ० 181

7. कठोपनिषद 2/2/9 अंतर्गत ईशादी नौ उपनिषद गोविंद भवन कार्यालय, गीताप्रेस गोरखपुर

8. सक्सेना डॉ० लक्ष्मी (1983) समकालीन भारतीय दर्शन प्रकाशक उ०प्र० हिन्दी संस्थान, लखनऊ।

9. विवेकानंद साहित्य संचयन (1988) प्रकाशक - स्वामी व्योमरुपानंद, अध्यक्ष रामकृष्ण मठ, नागपपुर पृ० 106

10. विवेकानंद साहित्य संचयन (सस्ता द्वितीय संस्करण 1988) प्रकाशक - रामकृष्ण मठ घन्तोली, नागपुर पृ०64

11. वही पृष्ठ 57

12. वही पृष्ठ 60

13. वही पृष्ठ 61

14. विवेकानंद साहित्य संचयन (1988) प्रकाशक - स्वामी व्योमरुपानंद, अध्यक्ष रामकृष्ण मठ, नागपपुर पृ० 145